कृष्ण साहित्य

(विविध संदर्भ)

सम्पादक
डॉ. नीतू परिहार

कृष्ण साहित्य : विविध संदर्भ

संपादक

डॉ० नीतू परिहार

अंकुर प्रकाशन
ANKUR PRAKASHAN

प्रतिलिप्याधिकार प्रकाशक व लेखक के अधीन सुरक्षित है। इनकी पूर्व लिखित अनुमति के बिना इस पुस्तक के किसी भी भाग का पुनः प्रकाशन वर्जित है। इस पुस्तक में व्यक्त विचार लेखकों के व्यक्तिगत हैं। इनसे किसी भी प्रकार की होने वाली हानि के लिए संपादक और प्रकाशक उत्तरदायी नहीं हैं। किसी भी विवादास्पद स्थिति में न्यायालय क्षेत्र उदयपुर मान्य होगा।

कृष्ण साहित्य : विविध संदर्भ

ISBN : *978-81-86064-98-6*

© : संपादक

मूल्य : चार सौ रुपये

संस्करण : 2023

प्रकाशक : अंकुर प्रकाशन
1/1 कांजी का हाटा, गायत्री मार्ग
उदयपुर (राज.) 313001
फोन नं. : (0294) 2417094, 2417039
(मो.) 9413528299
ईमेल : ankurprakashan15@gmail.com

आवरण : डॉ. शंकर शर्मा, उदयपुर

टाईपसेटिंग : देवेन्द्र कम्प्यूटर, दिल्ली

मुद्रक : रिसर्च प्रेस इण्डिया, दिल्ली

Krishna Sahitya : Vividh Sandarbh *(Hindi Literature)*

Edited By : Neetu Parihar

₹ 400

अनुक्रम

1	आत्म प्रबंधन : कृष्ण और गीता—प्रो. बी.एल. चौधरी	13
2	कृष्णभक्ति-परंपरा में सखी-भाव : प्रेमलक्षणा भक्ति का उत्कर्ष—डॉ. कृष्णचंद्र गोस्वामी 'विभास'	16
3	संप्रदाय मुक्त कृष्ण काव्य: चिंतन और चेतना के संदर्भ—प्रो. श्रद्धा सिंह	30
4	भक्ति साहित्य में कृष्ण—प्रो. कृष्ण कुमार शर्मा	37
5	राजस्थान में पुष्टिमार्गीय परम्परा एवं वल्लभाचार्य के सिद्धान्तों की व्यावहारिकता—डॉ. चन्द्रशेखर शर्मा	50
6	कृष्णभक्ति सरोवर में तैरता हंस : रसखान—डॉ. नीतू परिहार	64
7	मध्यकालीनकृष्ण भक्ति काव्यधारा: प्रमुख कवि और काव्य वैशिष्ट्य—डॉ. नवीन नंदवाना	71
8	भक्ति का लोक मार्ग : पुष्टि भक्ति संदर्भ—सूरसागर एवं पुष्टिवर्धन—डॉ. नवनीतप्रिया शर्मा	83
9	श्रीमद्भगवद्गीता में प्रतिपादित कर्मयोग एवं पुष्टिमार्ग —डॉ. प्रीति भट्ट	97
10	जैन आगमों में श्रीकृष्ण —डॉ. आशीष सिसोदिया	103
11	राधा की अंतरंग अनुभूतियों का गायन : कनुप्रिया —डॉ. नीता त्रिवेदी	111
12	रीतिकाल में कृष्ण भक्ति काव्य स्वरूप (बिहारी एवं घनानंद के विशेष संदर्भ में)—डॉ. कैलाश गहलोत	127

11

राधा की अंतरंग अनुभूतियों का गायन : कनुप्रिया

—डॉ. नीता त्रिवेदी

आधुनिककाल में कृष्ण साहित्य की दो महत्त्वपूर्ण कृतियाँ हैं—'अंधा युग' और 'कनुप्रिया'। इन दोनों कृतियों के रचनाकार एक ही है सर्वतो मुखी प्रतिभा संपन्न प्रख्यात कवि एवं कथाकार डॉ. धर्मवीर भारती। आपने साहित्य की कई विधाओं यथा कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, निबंध, आलोचना, अनुवाद, रिपोर्ताज आदि में अपनी लेखनी से विशिष्ट छाप छोड़ी है।

'अंधा युग' तथा 'कनुप्रिया' दोनों ही युद्ध और शांति के चरम क्षणों का काव्य है। दोनों में ही महाभारत के युद्ध और उसके बाद की अशांति, थकन, विवशता आदि पर लेखक के विचार हैं किंतु दोनों ही काव्य दो अलग-अलग ध्रुवों पर खड़े होकर युद्ध की विभीषिका को देख रहे हैं। कनुप्रिया में प्रेम की तन्मयता अपने चरम पर है। धर्मवीर भारती 'कनुप्रिया' की भूमिका में लिखते हैं दृश्लेखक के पिछले दृश्य काव्य में एक बिंदु से इस समस्या पर दृष्टिपात किया जा चुका है। गांधारी, युयुत्सु और अश्वत्थामा के माध्यम से। कनुप्रिया उनसे सर्वथा पृथक् बिल्कुल दूसरे बिंदु से चलकर उसी समस्या तक पहुँचती है, उसी प्रक्रिया को दूसरे भाव स्तर से देखती है और अपने अनजान में ही प्रश्न के ऐसे संदर्भ उद्घाटित करती है जो पूरक सिद्ध होते हैं। पर यह सब उसके अनजान में होता है क्योंकि उसकी मूल वृत्ति संशय या जिज्ञासा नहीं, भावाकुल तन्मयता है। कनुप्रिया की सारी प्रतिक्रियाएँ उसी तन्मयता की विभिन्न स्थितियाँ हैं।[1]

कनुप्रिया अर्थात कृष्ण की प्रिया, उनकी आराधिका-राधा। यह संपूर्ण काव्य राधा कृष्ण के प्रणयप्रसंग, कृष्ण के विरह में राधा की स्थिति, राधा की दृष्टि से कृष्ण, उनके प्रेम का अवलोकन करता है। उपमा ऋचा ने अपने एक लेख में

लिखा है—''कृष्ण को शरण देने वाला ये हृदय उसी आराधिका का है, जो पहले राधिका बनी और फिर राधिका से कृष्ण की आराध्या हो गई। कृष्ण आराधना करते हैं, इसलिए ये राधा है या ये कृष्ण की आराधना करती है, इसलिए राधिका कहलाती है। सच, बहुत कठिन है इसको परिभाषित करना क्योंकि इसकी परिभाषा स्वयं कृष्ण है खुद को असाधारण होने की सीमा तक साधारण बनाए रखने वाली ये किशोरी कृष्ण को अनायास ही मिली थी भागवत में। भागवत, रस का गीत है। उस गीत का रस भी और कोई नहीं, यही आराधिका है।''[12] पुरुष और प्रकृति के विविध प्रतीकों के माध्यम से सृष्टि के रहस्योद्घाटन के साथ ही प्रेम की तन्मयता और राधा की सहजता, विराटता और मन के कई सहज सुलभ प्रश्न हैं कनुप्रिया में जिनके प्रति उत्तर न तो इतिहास के पास है न ही वर्तमान के पास।

डॉ. धर्मवीर भारती 'कनुप्रिया' की भूमिका में इसे स्पष्ट करते हैं—''ऐसे तो क्षण होते ही हैं जब लगता है कि इतिहास की दुर्दांत शक्तियाँ अपनी निर्मम गति से बढ़ रही हैं, जिनमें कभी हम अपने को विवश पाते हैं, कभी विक्षुब्ध, कभी विद्रोही और प्रतिशोध युक्त, कभी वल्गाएँ हाथ में लेकर गतिनायक या व्याख्याकार, तो कभी चुपचाप शाप या सलीब स्वीकार करते हुए आत्मबलिदानी उद्धारक यात्राता[3], लेकिन ऐसे भी क्षण होते हैं जब हमें लगता है कि यह सब जो बाहर का उद्वेग है। महत्त्व उसका नहीं है। महत्त्व उसका है जो हमारे अंदर साक्षात्कृत होता है—चरम तन्मयता का क्षण जो एक स्तर पर सारे बाह्य इतिहास की प्रक्रिया से ज्यादा मूल्यवान सिद्ध होता है, जो क्षण हमें सीपी की तरह खोल गया है। इस तरह कि समस्त बाह्य,अतीत, वर्तमान और भविष्य, सिमटकर उस क्षण में पुंजीभूत हो गया है, और हम हम नहीं रहे।''[13]

'अंधायुग' में बाहर का उद्वेग अधिक है। 'कनुप्रिया' तो केवल चरम तन्मयता के उसी क्षण का काव्य है जिसके आलोक में बाह्य जगत भी उसी क्षण में समाहित हो जाता है। वैसे तो संपूर्ण काव्य ही राधा का आत्मकथन है किंतु जिस सहजता, जिस प्रेम की कसौटी पर राधा इस बाह्य जगत को, अपनी सृष्टि के केंद्र कान्हा को समझती है, परखती है वहीं राधा की तन्मयता संपूर्ण काव्य, समस्त चराचर से बड़ी हो जाती है इसी संदर्भ में भारती जी 'कनुप्रिया' की भूमिका में आगे लिखते हैं—''लेकिन वह क्या करें जिसने अपने मन से जीवन जिया है, तन्मयता के क्षणों में डूब कर सार्थकता पाई है, और जो अब उद्घोषित महानताओं से अभिभूत और आतंकित नहीं होता बल्कि आग्रह करता है कि वह उस सहज की कसौटी पर समस्त को कसेगा। ऐसा ही आग्रह है कनुप्रिया का।''[14]

'कनुप्रिया' राधा के मन की अंतरंग अनुभूतियों का गायन है, राधा का, उसके प्रेम का, सहज प्रस्फुटन है। प्रेम की सहजता से परिपक्वता की स्थिति तक की यात्रा है कनुप्रिया। भारती जी ने संपूर्ण काव्य को पाँच खंडों में विभक्त किया है—पूर्वराग-मंजरी, परिणय, सृष्टि-संकल्प, इतिहास तथा समापन, पूर्वराग-मंजरी, परिणय और सृष्टि-संकल्प के अंतर्गत राधा कृष्ण के बहुमुखी प्रणय के विविध आयामों से प्रेम की निर्मल अजस्र धारा प्रवाहित हो रही है जो इतिहास तथा समापन में कई मोड़ो से गुजरती हुई राधा और कृष्ण को एक नए रूप में व्याख्यायित करती है। एक नई दृष्टि प्रदान करती है। डॉ. परविंदर कौर के अनुसार—"कनुप्रिया राधा-कृष्ण के प्रेम का मनोवैज्ञानिक विकास है। पूर्वराग मंजरी, परिणय, सृष्टि-संकल्प, इतिहास और समापन के अंतर्गत राधा की प्रेमाभिव्यक्ति में कहीं भी अस्वाभाविकता का आभास नहीं होता, अपितु मनोवैज्ञानिक भाव-बोध है।"[5]

कृष्ण, महाभारत युद्ध के बाद नितांत एकाकी, थके हुए, व्याकुल, संशयग्रस्त होकर अपनी राधा को पुकारते हैं और राधा इसी क्षण की प्रतीक्षा में उसी अशोक वृक्ष के नीचे कृष्ण की प्रतीक्षा करती है कि कब उसके कृष्ण उन्हें पुकारे और राधा उन्हें अपने आंचल की छाया में विश्राम देकर सुला दे।

भारती जी ने 'कनुप्रिया' का प्रारंभ राधा के कैशोर्य-सुलभ मानवीय भावों से किया है धीरे.धीरे भावों का विकास एवं उनकी परिपक्वता उत्तरोत्तर विकसित होती है। लेखक ने भूमिका में लिखा है। "पूर्वरागा और मंजरी-परिणय उस विकास का प्रथम चरण, सृष्टि-संकल्प द्वितीय चरण तथा महाभारत काल से जीवन के अंत तक शासक, कूटनीतिज्ञ, व्याख्याकार कृष्ण के इतिहास निर्माण को 'कनुप्रिया' की दृष्टि से देखने वाले खंड-इतिहास तथा समापन इस विकास का तृतीय चरण चित्रित करते हैं।"[6]

पूर्वराग के पाँच गीत तथा मंजरी परिणय के तीन गीत राधा के प्रेम के सहज उच्छ्वास हैं जहाँ राधा के प्रेम की तन्मयता तथा किशोरावस्था का सहज एवं सरल मन अपनी समस्त कमनीयता के साथ मुखर है। सृष्टि-संकल्प में राधा कृष्ण का प्रेम एक अलौकिक आह्लाद, प्रकृति एवं पुरुष के विविध प्रतीकों के माध्यम से पल्लवित एवं प्रस्फुटित होता है। इतिहास खंड में इतिहास निर्माता, द्वारकाधीश, कूटनीतिज्ञ, गीतोपदेशक कृष्ण को कनुप्रिया अपने सहज प्रेम की कसौटी पर देखती है, समझती है, व्याख्यायित करती है। समापन राधा और कृष्ण के उसी प्रेम पर होता है जहाँ राधा कृष्ण की प्रतीक्षा में है और कृष्ण महाभारत युद्ध के पश्चात्

नितांत एकाकी, क्लांत और दुखी हैं। कृष्ण अधूरे हैं राधा के बिना और उन्हीं क्षणों में कृष्ण की पुकार पर प्रतीक्षारत राधा आती है कृष्ण से मिलने, उनकी थकान को दूर करने और उनके एकाकीपन को दूर करने।

भारती जी ने 'कनुप्रिया' में श्रीमद्भागवत के योगीश्वर कृष्ण को दृष्टि में रखते हुए वर्तमान संदर्भों को, समस्याओं को भावनात्मक रूप से समझाने का सार्थक प्रयास किया है। इसमें राधा-कृष्ण दोनों ही नवीन संदर्भों एवं नूतन रूप से उपस्थित हुए हैं। 'कनुप्रिया' के प्रारंभिक गीतों में कृष्ण के प्रेम की दिव्यता, अलौकिकता कई कई रूपों में प्रस्फुटित होती है। राधा-कृष्ण की प्रिया है। कनुप्रिया है, वह कृष्ण की आद्या शक्ति है, प्रकृति स्वरूपा है तथा कृष्ण पुरुष रूप में हैं। राधा प्रकृति के कण-कण में जीवन बनकर परिव्याप्त है। पूर्व राग के प्रथम गीत में ही अशोक वृक्ष राधा के चरणों के स्पर्श की प्रतीक्षा में जन्मों से पुष्पहीन खड़ा है—

ओपथ के किनारे खड़े
छायादार पावन अशोक-वृक्ष
तुम यह क्यों कहते हो कि
तुम मेरे चरणों के स्पर्श की प्रतीक्षा में
जन्मों से पुष्पहीन खड़े थे

प्रकृतिस्वरूपा राधा अशोक वृक्ष को समझाती है कि मैं तो कई कई रूपों में तुम्हीं में समाई हूँ—

तुम को क्या मालूम कि
मैं कितनी बार केवल तुम्हारे लिए।
धूल में मिली हूँ
धरती में गहरे उतर
जड़ों के सहारे
तुम्हारे कठोर तने के रेशों में
कलियाँ बन, कोंपलबन, सौरभ बन, लाली बन।
चुपके से सो गई हूँ
कि कब मधुमास आए और तुम कब मेरे
प्रस्फुटन से छा जाओ।[8]

कृष्ण राधा की सांसो में संगीत बनकर समाए हुए हैं। यह राधा के प्रेम की दिव्यता है जहाँ कृष्ण उनसे दूर होकर भी उन्हीं में समाहित है—

यह जो अकस्मात
आज मेरे जिस्म के सितार के
एक-एक तार में तुम झंकार उठे हो—
सच बतलाना मेरे स्वर्णिम संगीत
तुम कब से मुझ में छिपे सो रहे थे।[9]

इन गीतों में राधा कृष्ण के प्रेम की कई कई लीलाएं अभिव्यक्त हुई है। कृष्ण के प्रेम का सम्मोहनए राधा का समर्पण कई कई रूपों में मुखर होता है। एक रूपक दृष्टव्य है—

घाट से लौटते हुए
तीसरे पहर की अलसायी बेला में
मैंने अक्सर तुह्में कदंब के नीचे
चुपचाप ध्यानमग्न खड़े पाया
मैंने कोई अज्ञात वनदेवता समझ
कितनी बार तुह्में प्रणाम कर सिर झुकाया
पर तुम खड़े रहे अडिग, निर्लिप्त, वीतराग, निश्चल!
तुमने कभी उसे स्वीकारा ही नहीं।[10]

पर क्या ऐसा हो सकता है कि राधा का अभिवादन कृष्ण अस्वीकार कर दें। राधा भी मान करते हुए कृष्ण को प्रणाम करना छोड़ देती है पर क्या कृष्ण के सम्मोहन से छूटना इतना भी आसान हो सकता है। राधा के ही शब्दों में—

और क्या मुझे मालूम था कि
तुम केवल निश्चल खड़े नहीं रहे
तुह्में वह प्रणाम की मुद्रा और हाथों की गति
इस तरह भा गयी कि
तुम मेरे एक-एक अंग की एक-एक गति को
पूरी तरह बांध लोगे
इस संपूर्ण के लोभी तुम
भला उस प्रणाम मात्र को क्यों स्वीकारते?
और मुझ पगली को देखो कि मैं
तुह्में समझती थी कि तुम कितने वीतराग हो
कितने निर्लिप्त।[11]

राधा कृष्ण के प्रेम में इतनी बेसुध है कि उसे यमुना के सांवले जल में भी

कृष्ण का आभास होता है। उसे लगता है—

मानो यह यमुना की सांवली गहराई नहीं है
यह तुम हो जो सारे आवरण दूर कर
मुझे चारों ओर से कण-कण, रोम-रोम
अपने श्यामल प्रगाढ़ अथाह आलिंगन में पोर-पोर
कसे हुए हो।[12]

राधा के कृष्ण हर समय, हर पल उसके आसपास ही हैं। उनकी उपस्थिति का आभास राधा को प्रकृति के हर कण-कण में हो रहा है। राधा को रास की पूर्वस्मृति आती है तो उन्हें पश्चाताप भी होता है कि वह रास की रात में कृष्ण के पास से लौट क्यों आयी—

मैं उस दिन लौटी क्यों—
कण-कण अपने को तुम्हें देकर रीत क्यों नहीं गई?
तुमने तो उस रास की रात
जिसे अंशतरू भी आत्मसात किया
उसे संपूर्ण बनाकर
वापस अपने.अपने घर भेज दिया।[13]

पूर्वराग के इन पाँचों गीतों में राधा द्वारा कृष्ण की स्मृति के माध्यम से प्रेम के विविध दृश्य उपस्थित होते हैं। सुलभा बाजीराव ने इन गीतों के संबंध में कहा है—"पूर्वराग के पाँचों गीत स्त्री पुरुष के बीच उत्पन्न होने वाले अनुराग के उत्तरोत्तर अबाध गति से विकसित होने की कथा कहते हैं।"[14]

मंजरी परिणय के अंतर्गत तीन लंबे गीत हैं जिसमें राधा कृष्ण प्रेम के कई-कई बिम्ब, कई रूपक, कई प्रतीक, लौकिक-अलौकिक, कई-कई संकेत अभिव्यक्त होते हैं। राधा कैशोर्य की बाल सुलभ भावना में कई संकेत तो समझ जाती है और कई संकेत जिनके अर्थ उसे कृष्ण के जाने के बाद समझ आते हैं जिस कारण वह दुखी भी है, व्यथित भी। राधा कई-कई रूपों में अपने मनोभाव कृष्ण को समझाती है—

तुम्हारी जन्म-जन्मांतर की रहस्यमयी लीला की
एकांत-संगिनी मैं
इन क्षणों में अकस्मात
तुमसे पृथक नहीं हो जाती मेरे प्राण,
तुम यह क्यों नहीं समझ पाते कि लाज

सिर्फ जिस्म की नहीं होती
मन की भी होती है
एक मधुर भय
एक अनजान संशय
एक आग्रह भरा गोपन,
एक निर्व्याख्या वेदना या उदासी,
जो मुझे बार-बार चरमसुख के क्षणों में भी
अभिभूत कर लेती है।[15]

राधा को दुख है कि कृष्ण के बार-बार बांसुरी बजा कर बुलाने पर भी वह उस शाम आम्र मंजरियों के नीचे नहीं पहुँच पाई। कृष्ण द्वारा उदास मन से पगडंडी पर आम्र मंजरी को चूर-चूर कर बिखेर देने पर राधा कहती है—

यह तुमने क्या किया प्रिय!
क्या अपने अनजाने में ही
उस आम के बौर से मेरी क्वांरी उजली
पवित्र माँग भर रहे थे साँवरे![16]

राधा व्यथित है कि वह कृष्ण के आम के बोर का संकेत नहीं समझ पाई। वह कृष्ण से कहती है—

कतनी बार जब तुमने अर्द्धोन्मीलित कमल भेजा
तो मैं तुरंत समझ गई कि तुमने संझाबिरिया बुलाया है
कितनी बार जब तुमने अंजुरी भर-भर बेले के फूल भेजें
तो मैं समझ गई कि तुह्मारी अंजुरियों ने
किसे याद किया है
कितनी बार जब तुमने अगस्त्य के दो
उजले कटावदार फूल भेजें
तो मैं समझ गई कि
तुम फिर मेरे उजले कटावदार पाँवों में
तीसरे पहर—टीले के पास वाले
सहकार की घनी छांव में
बैठकर महावर लगाना चाहते हो।
आज अगर आम के बोर का संकेत नहीं भी
समझ पायी तो क्या इतना बड़ा मान ठान लोगे ?[17]

राधा कई-कई अर्थों, कई-कई रूपकों से कृष्ण को मनाती है। साथ ही 'तुम मेरे कौन हो?' गीत में कृष्ण के साथ अपने कई-कई संबंध जोड़ती है। हर संबंध में एक नया बिम्ब उभरता है और अंत में इन सभी संबंधों के मध्य से राधा का स्वयं से साक्षात्कार होता है और फिर समस्त सृष्टि, कृष्ण की हर लीला राधा में ही समाहित हो जाती है—

तो मुझे अकस्मात लगा है
कि मेरे अंग-अंग से ज्योति फूटी पड़ रही है
तुह्मारी शक्ति तो मैं ही हूँ
तुह्मारा संबल,
तुह्मारी योगमाया,
इस निखिल पारावार में ही परिव्याप्त हूँ
विराट,
सीमाहीन,
अदम्य,
दुर्दांत[18]

राधा और कृष्ण का प्रेम जब उस विराट स्वरूप को धारण कर लेता है जहाँ उन दोनों के अतिरिक्त समस्त सृष्टि में और किसी का अस्तित्व नहीं है। जहाँ राधा अपने आप से परिचित होती है। वह कहती है।

पर जब मुझे चेत हुआ
तो मैंने पाया कि हाय सीमा कैसी,
मैं तो वह हूँ जिसे दिग्वधू कहते हैं, कालवधू—
समय और दिशाओं की सीमाहीन पगडंडियों पर
अनंत काल से, अनंत दिशाओं में
तुह्मारे साथ-साथ चलती चली आ रही हूँ, चलती
चली जाऊँगी...
इस यात्रा का आदि न तो तुह्में स्मरण है न मुझे
और अंत तो इस यात्रा का है ही नहीं मेरे
सहयात्री![19]

भारती जी ने 'कनुप्रिया के सृष्टि-संकल्प के तीनों गीतों के माध्यम से राधा कृष्ण के प्रेम की विराटता को वाणी दी है। 'सृजन-संगिनी' गीत में सृष्टि के प्रत्येक कण में, उसकी गति-लय में, सृजन-विनाश, प्रवाह सभी में कृष्ण की इच्छा उनकी संकल्प शक्ति का विस्तार है और कृष्ण की संपूर्ण इच्छा का अर्थ

केवल और केवल राधा है—

और यह प्रवाह में बहती हुई
तुह्मारी असंख्य सृष्टियों का क्रम
महज हमारे गहरे प्यार
प्रगाढ़ विलास
और अतृप्त क्रीड़ा की अनंत पुनरावृत्तियाँ हैं—
ओ मेरे स्त्रष्टा
तुह्मारे संपूर्ण अस्तित्व का अर्थ है
मात्र तुह्मारी सृष्टि
तुह्मारी संपूर्ण सृष्टि का अर्थ है
मात्र तुह्मारी इच्छा
और तुह्मारी संपूर्ण इच्छा का अर्थ हूँ
केवल मैं!
केवल मैं!!
केवल मैं!!![20]

समस्त चराचर के प्रत्येक कण में राधा कृष्ण ही है। प्रकृति के संपूर्ण विस्तार में राधा कृष्ण का असीम प्रेम ही परिव्याप्त है। राधा कहती है—

अगर यह निखिल सृष्टि
मेरा ही लीलातन है
तुह्मारे आस्वादन के लिए।[21]

फिर भी राधा के मन में एक आदिम भय व्याप्त है। यह भय प्रकृति स्वरूपा राधा में सहज रूप से उदित होता है। वह अपनी शक्तियों को भी पहचानती है फिर भी एक आदिम भय उसमें है। वह कृष्ण से पूछती है—

और अगर यह चंद्रमा मेरी उंगलियों के
पोरों की छाप है
और मेरे इशारे पर घटता और बढ़ता है
और अगर यह आकाशगंगा मेरे ही
केश-विन्यास की शोभा है
और मेरे एक इंगित पर इसके अनंत
ब्रह्मांड अपनी दिशा बदल सकते हैं—
तो मुझे डर किससे लगता है

मेरे बंधु![22]

'केलिसखी' गीत प्रेम की, अभिसार की अभिव्यक्ति का गीत है। इस गीत में प्रेम की उद्दाम, उत्कंठा, व्याकुलता व्यक्त हुई है—

और भय,
आदिम भय,
तर्कहीन, कारणहीन भय जो
मुझे तुमसे दूर ले गया था, बहुत दूर—
क्या इसीलिए कि मुझे
दुगने आवेग से तुह्मारे पास लौटा लावे
और क्या यह भयकी ही काँपती उंगलियाँ हैं
जो मेरे एक-एक बंधन को शिथिल
करती जा रही हैं
और मैं कुछ कह नहीं पाती![23]

राधा स्वयं को, अपनी शक्तियों को भूल केवल उस क्षण में जीवंत होना चाहती है। प्रकृति अपनी बाह्य शक्तियों को समेट स्वयं में ही समा जाना चाहती है।

यह बाहर फैला-फैला समुद्र मेरा है
पर आज मैं उधर नहीं देखना चाहती
यह प्रगाढ़ अंधेरे के कंठ में झूमती
ग्रहों-उपग्रहों और नक्षत्रों की
ज्योतिर्माला मैं ही हूँ
और असंख्य ब्रह्माण्डों का
दिशाओं का,
समय का
अनंत प्रवाह! मैं ही हूँ
पर आज मैं अपने को भूल जाना चाहती हूँ[24]

इन अंतरंग क्षणों में, समय को बांधकर, दिशाओं को रोककर समस्त ब्रह्मांड में केवल कृष्ण और राधा ये दोनों ही हैं—

आओ मेरे अधैर्य !
दिशाएं घुल गई है
जगत लीन हो चुका है

समय मेरे अलक-पाश में बंध चुका है।
और इस निखिल सृष्टि के
अपार विस्तार में
तुह्मारे साथ मैं हूँ। केवल मैं—
तुह्मारी अंतरंग केलिसखी![25]

राधा कृष्ण की अंतरंग केलिसखी जिनके मिलने से सृष्टि का निर्माण होता है और राधा के थक कर सो जाने पर यह निखिल सृष्टि लय हो जाती है। कृष्ण पुनः अपने संकल्प और इच्छा के द्वारा राधा को जगाते हैं और पुनः सृष्टि का सृजन होता है। इस प्रकार असंख्य सृष्टियों का लय एवं पुनः सृजन राधा कृष्ण के अलौकिक प्रेम के संकल्प एवं इच्छा पर निर्भर है। अतः इस 'सृष्टि-.संकल्प' शीर्षक में राधा कृष्ण का प्रेम केवल लौकिक एवं दैहिक स्तर पर न होकर प्रकृति-पुरुष के दिव्य रूप से ओतप्रोत हो जाता है।

'इतिहास' शीर्षक से कृष्ण अब द्वारकाधीश, कूटनीतिज्ञ, महाभारत के नायक के रूप में उभरते हैं। यह शीर्षक कथा के चरमोत्कर्ष का केन्द्रीय बिंदु है जहाँ से कथा समापन की ओर आकर विराम लेती है। इतिहास खंड में सात गीत हैं 'विप्रलब्धा', 'सेतु : मैं', 'उसी आम के नीचे', 'अमंगल छाया', 'एक प्रश्न', 'शब्द : अर्थहीन' तथा 'समुद्र-स्वप्न'। 'समुद्र-स्वप्न' की ही अंतिम कड़ी समापन है।

'इतिहास' खंड में राधा का विरह मुखर है। कृष्ण के विरह में राधा अपना दर्प खोती जा रही है। 'विप्रलब्धा' कविता में राधा कहती है—

अब सिर्फ मैं हूँ, यह तन है, और याद है
खाली दर्पण में धुंधला-सा एक प्रतिबिंब
मुड़-मुड़ लहराता हुआ
निज को दोहराता हुआ![26]

'सेतु : मैं' कविता में राधा को इतिहास से शिकायत है, कान्हा से शिकायत है। इतिहास राधा को सेतु बनाकर कृष्ण को उससे छीनकर ले गया—

नीचे की घाटी से
ऊपर के शिखरों पर
जिसको जाना था वह चला गया—
हाय मुझी पर पग रख
मेरी बाहों से
इतिहास तुह्में ले गया![27]

राधा कृष्ण से प्रश्न करती है कि हे कनु, क्या मैं तुह्मारे लिए सिर्फ एक सेतु थी—

सुनो कनु, सुनो
क्या मैं सिर्फ एक सेतु थी तुह्मारे लिए
लीलाभूमि और युद्ध क्षेत्र के
अलंघ्य अंतराल में![28]

कृष्ण के द्वारकाधीश बनने में, सदी के महानायक बनने में बहुत कुछ ऐसा था जो पीछे छूट गया था। राधा उसी छूटे हुए बिंदु पर खड़े होकर कृष्ण से प्रश्न करती है—

तुह्मारे महान बनने में
क्या मेरा कुछ टूट कर बिखर गया है कनु![29]

कृष्ण के जीवन में आए परिवर्तन से राधा के मन में ऐसा बहुत कुछ है जो टूटकर बिखर गया है। राधा अब भी पथ के किनारे खड़े छायादार पावन अशोक-वृक्ष के नीचे कृष्ण की प्रतीक्षा में रोज आती है। आम के नए बौरों के पास हर रोज जाती है किंतु अब उसे वे सब अर्थहीन प्रतीत होते हैं—

नया है
केवल मेरा
सूनी माँग आना
सूनी माँग, शिथिल चरण, असमर्पिता
ज्यों का त्यों लौट जाना...[30]

'अमंगल छाया' गीत में राधा को युद्ध एक अमंगल छाया के रूप में दिखाई पड़ता है जो उसके गाँव पर छा रही है। कवि राधा से कहते हैं कि कृष्ण को पाने के लिए उस कदंब की राह से होकर ना जाना जहाँ कभी ध्यानमग्न कान्हा राधा को बाँसुरी बजा कर बुलाते थे क्योंकि आज उधर से कृष्ण की अठारह अक्षौहिणी सेनाएं युद्ध में भाग लेने जा रही है। यह भारती जी की मौलिक कल्पना है। कवि राधा को समझाता है कि कृष्ण तुह्मारा प्रिय है लेकिन तुह्मारे गाँव को रौंदती ये सेना तुह्में नहीं पहचानती क्योंकि सेना युद्ध का प्रतीक है और राधा प्रेम का पर्याय। स्वाभाविक है कि युद्ध प्रेम के प्रति अपरिचित बना रहे—

उदास क्यों होती है नासमझ
कि इस भीड़-भाड़ में
तू और तेरा प्यार नितांत अपरिचित
छूट गए हैं[31]

राधा कृष्ण के इस स्वरूप से नितांत अपरिचित है। वह तो केवल प्रेम जानती है या उतना ही जितना कृष्ण ने उसे समझाया है। राधा चाहती है कि अर्जुन की तरह कृष्ण उसे भी गीता ज्ञान समझा दे जिससे वह युद्ध, धर्माधर्म, पाप-पुण्य, न्याय-दंड, क्षमाशीलता आदि की सार्थकता समझ पाए—

जितनी समझ तुमसे अब तक पाई है कनु
उतनी बटोर कर भी
कितना कुछ है जिसका
कोई भी अर्थ मुझे समझ नहीं आता है
अर्जुन की तरह कभी
मुझे भी समझा दो
सार्थकता है क्या बंधु ?[32]

'शब्द : अर्थहीन' गीत में राधा कहती है कि इस सार्थकता को तुम मुझे कैसे समझोगे कनु ? क्योंकि ये सभी शब्द मेरे लिए अर्थहीन है—

कर्म, स्वधर्म, निर्णय, दायित्व...
मुझ तक आते-आते सब बदल गए हैं
मुझे सुन पड़ता है केवल
राधन्, राधन्, राधन्
शब्द, शब्द, शब्द,
तुह्मारे शब्द अगणित हैं कनु-संख्यातीत
पर उनका अर्थ मात्र एक है—
मैं, / मैं, / केवल मैं! फिर उन शब्दों से
मुझी को
इतिहास कैसे समझाओगे कनु ?[33]

'समुद्र-स्वप्न' गीत में कवि ने राधा को लक्ष्मी-स्वरूपा दर्शाया है। जो युग-युगों से विष्णु के साथ विराजित हैं। राधा उसी क्षीर-समुद्र को स्वप्न में देखती है। कृष्ण महाभारत युद्ध में जीतने के बाद भी उदास, कभी क्लांत, कभी विस्मित, कभी आहत होकर उसी समुद्र किनारे बैठे हैं। सब कुछ पाकर इतने खिन्न। कृष्ण के मन में अंतर्द्वंद्व है और यहाँ पुरुष पुनः प्रकृति की शरण में जाता है जहाँ प्रकृति स्वरूपा राधा कृष्ण को अपने प्रेम का अभयदान देती है। वह कहती है—

और चारों ओर
एक खिन्न दृष्टि से देख कर

एक गहरी सांस लेकर
तुमने असफल इतिहास को
जीर्णवसन की भाँति त्याग दिया है[34]

उस असफल इतिहास को त्यागने के बाद ही कृष्ण को पुनः राधा की याद आती है—

और अब इस क्षण तुम
केवल एक भरी हुई
पकी हुई
गहरी पुकार हो...
सब त्याग कर
मेरे लिए भटकती हुई...[35]

इसी का विस्तार 'समापन' गीत में होता है। कृष्ण की पुकार पर राधा आती है अपने कनु से मिलने—

और जनमांतरों की अनंत पगडंडी के
कठिनतम मोड़ पर खड़ी होकर
तुह्मारी प्रतीक्षा कर रही हूँ।
कि, इस बार इतिहास बनाते समय
तुम अकेले न छूट जाओ।[36]

राधा कृष्ण से प्रश्न करती है—

सुनो मेरे प्यार!
प्रगाढ़ केलिक्षणों में अपनी अंतरंग
सखी को तुमने बाहों में गूंथा
पर उसे इतिहास में गूंथने से हिचक क्यों गए प्रभु ?[37]

शायद इसी कारण कृष्ण उद्विग्न हो रहे थे क्योंकि राधा के बिना इतिहास कभी पूर्ण नहीं हो सकता क्योंकि प्रेम के बिना शब्द अर्थहीन ही रहते हैं। राधा कहती है—

बिना मेरे कोई भी अर्थ कैसे निकल पाता
तुह्मारे इतिहास का
शब्द, शब्द, शब्द ...
राधा के बिना
सब

रक्त के प्यासे
अर्थहीन शब्द![38]

अतः 'कनुप्रिया' के बिना कान्हा का इतिहास असफल ही रह जाएगा। सारी सृष्टि को शरण देने की सामर्थ्य भले ही कृष्ण में हो लेकिन कृष्ण को शरण देने की सामर्थ्य केवल 'कनुप्रिया' के हृदय में है। इस प्रकार भारती जी ने राधा कृष्ण की पौराणिक कथा को मौलिक परंपरा एवं नवीन बौद्धिकता प्रदान की है। 'कनुप्रिया' युद्ध पर प्रेम की जीत के साथ ही प्रेम का महाराग बनकर दिगंत पर छा जाता है। 'कनुप्रिया' की राधा वर्तमान संदर्भों में नारी चेतना, उसकी शक्ति, प्रेम के विस्तार, राधा की आल्हादिनी शक्ति का विस्तार है। राधा कृष्ण के प्रेम, उनकी लौकिक लीलाओं का अलौकिक विस्तार, पुरुष और प्रकृति के प्रेम का विस्तार 'कनुप्रिया' में सहज रूप से अभिव्यक्त होता है। भारती जी युद्ध की समस्या को प्रेम के दृष्टिकोण से देखते हैं।

संदर्भ—

1. धर्मवीर भारती : कनुप्रिया : भूमिका, भारतीय ज्ञानपीठ, लोदी रोड, नई दिल्ली, इक्कीसवाँ संस्करण, 2015
2. उपमा ऋचा : बूझत श्याम कौन तू गौरी, अहा! जिन्दगी, अगस्त 2012, सं. आलोक श्रीवास्तव, पृ. 26-27
3. धर्मवीर भारती : कनुप्रिया : भूमिका, भारतीय ज्ञानपीठ, लोदी रोड, नई दिल्ली, इक्कीसवां संस्करण, 2015
4. वही
5. डॉ. परविंदर कौर : कृष्ण काव्य परंपरा में धर्मवीर भारती का स्थान, भारतीय ग्रन्थ निकेतन, दरियागंज, नई दिल्ली, 2005 पृ. 48
6. धर्मवीर भारती : कनुप्रिया : भूमिका, भारतीय ज्ञानपीठ, लोदी रोड, नई दिल्ली, इक्कीसवाँ संस्करण, 2015
7. धर्मवीर भारती : कनुप्रिया, भारतीय ज्ञानपीठ, लोदी रोड, नई दिल्ली, इक्कीसवाँ संस्करण, 2015, पृ. 11
8. वही पृ. 11
9. वही पृ. 13
10. वही पृ. 14
11. वही पृ. 14-15
12. वही पृ. 16
13. वही पृ. 17
14. सुलभा बाजीराव पाटील, कनुप्रिया : एक मूल्यांकन, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, सं. 1981,

पृ. 34
15. धर्मवीर भारती : कनुप्रिया, भारतीय ज्ञानपीठ, लोदी रोड, नई दिल्ली, इक्कीसवां संस्करण, 2015, पृ. 21
16. वही पृ. 23
17. वही पृ. 26
18. वही पृ. 36
19. वही पृ. 37
20. वही पृ. 44
21. वही पृ. 45
22. वही पृ. 47-48
23. वही पृ. 50-51
24. वही पृ. 52
25. वही पृ. 54
26. वही पृ. 57-58
27. वही पृ. 60
28. वही पृ. 60
29. वही पृ. 63
30. वही पृ. 63
31. वही पृ. 66
32. वही पृ. 68-69
33. वही पृ. 72
34. वही पृ. 76
35. पृ. 77
36. वही पृ. 81
37. वही पृ. 82
38. वही पृ. 82

सहायक आचार्य (हिंदी विभाग)
मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय,
उदयपुर (राज.)

❑

अक्षर प्रकाशन

ISBN : 978-81-86064-98-6

₹ : 400.00